|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 14: गुणत्रयविभागयोग

1/2 (श्लोक 1-13), रविवार, 20 अप्रैल 2025

विवेचक: गीता विदूषी सौ वंदना जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/bGNO34gnzSo

गुणों के आवरण और विक्षेप

"सद्गुणों की साधना में ध्येय ज्योति नित जले", इस मधुर प्रार्थना के साथ आज के सत्र का प्रारम्भ हुआ। यह अध्याय हमारे जीवन यापन हेतु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह अध्याय गुणत्रयविभागयोग कहलाता है। इसमें हम जान पाते हैं कि गुण क्या हैं? गीता को कैसे हम अपने अन्दर उतारें और किस प्रकार गुणों के बन्धन से छूट कर गुणातीत की ओर अग्रसर हों? इस अध्याय में हम गुणातीत मनुष्य के लक्षणों के बारे में जान सकते हैं।

भगवद्गीता अनुपम है, जिसे श्रीभगवान् ने किङ्कर्त्तव्य विमूढ़ अर्जुन को कर्त्तव्य पथ पर लाने के लिए समराङ्गण में गाया। इतने सुन्दर गीत का शुद्ध उच्चारण हम यहाँ सीख रहे हैं और उसके अर्थ की गहराई में जानने का प्रयास कर रहे हैं, परन्तु यह हमारे अन्दर तो तभी उतरेगी जब हम पर सद्गुरु की कृपा होगी। जब तक हमारी गागर रिक्त नहीं होगी तब तक वह ज्ञान से भरी नहीं जा सकती। हमारे पूर्वाग्रह से हमारा मस्तिष्क भरा रहता है। इसी प्रकार अर्जुन का मन भी इन्हीं विचारों से भरा हुआ है। अर्जुन जब कहते हैं कि हे भगवान! मैं तो आपकी शरण में आया हुआ हूँ। मैं तो कुछ नहीं जानता हूँ।

।।शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।।

ऐसा कहकर जब अर्जुन ने श्रीभगवान् का शिष्यत्व ग्रहण किया तब श्रीभगवान् के मुखारविन्द से ज्ञान की गङ्गा प्रवाहित हुई।

ज्ञानेश्वर महाराज ने अपने सद्गुरु के चरणों में नतमस्तक होते हुए ज्ञानेश्वरी के रूप में भगवद्गीता पर भाष्य लिखा। वे कहते हैं कि आप मेरी गुरु मैया तो हैं ही, आपके चरणों में नतमस्तक होने से मेरे जीवन में सरस्वती का प्रवेश होता है और वह ज्ञान मेरे अन्दर ठहराव के रूप में ठहरने लगता है। साधक के लिए गुरु माँ के समान होते हैं और माँ हमारी प्रथम गुरु होती है। उनका प्रवेश सरस्वती के चरणों के साथ हमारे जीवन में होता है।

म्हणून साधकां तू माऊली, पिके सारस्वत तुझ्या पाउली।
ह्या कारणे तुझी साऊली, खंडीन भी कदा।।

भगवद्गीता पर भाष्य लिखने से पहले ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

आतां कृपाभांडवल सोडीं । भरीं मति माझी पोतडी।

आपकी कृपा मुझ पर कीजिये और सारा ज्ञान मेरे मस्तिष्क में अवतरित कीजिये।

गुरुदेव कहते हैं कि यह **स्वनिरीक्षण** अध्याय है। हम स्वयं के अन्दर झाँककर देख सकते हैं कि हम कैसे गुणों के बन्धन में हैं? इस अध्याय का नाम है **गुणत्रयविभागयोग।** गुण का एक अर्थ है गुणधर्म और दूसरा संस्कृत में इसका अर्थ बन्धन या रस्सी भी है। यह मानसिक बन्धन है। जब तक हम यह नहीं समझेंगे कि हम कौन से बन्धन में हैं? तब तक हम बन्धन से मुक्ति भी नहीं पा सकते।

14.1

श्रीभगवानुवाच
परं(म्) भूयः(फ्) प्रवक्ष्यामि, ज्ञानानां(ञ्) ज्ञानमुत्तमम्।
यज्ज्ञात्वा मुनयः(स्) सर्वे, परां(म्) सिद्धिमितो गताः॥14.1॥

श्रीभगवान बोले – सम्पूर्ण ज्ञानों में उत्तम (और) श्रेष्ठ ज्ञान को मैं फिर कहूँगा, जिसको जानकर सब के सब मुनि लोग इस संसार से (मुक्त होकर) परमसिद्धि को प्राप्त हो गये हैं।

विवेचन: श्रीभगवान् की वाणी से इस अध्याय का आरम्भ होता है। अर्जुन ने कोई प्रश्न नहीं पूछा। श्रीभगवान् अन्तर्यामी हैं। अर्जुन के मन में जो भी भ्रान्ति है, उन्हें जानकर श्रीभगवान् स्वयं ही कहना आरम्भ कर देते हैं। बारहवें अध्याय में सगुण व निर्गुण उपासकों के लक्षण बताये। तेरहवें अध्याय में ज्ञानी के लक्षण बताये। निराकार भगवान् के उपासक में ज्ञान अवतरित होने के पश्चात उसके लक्षण कैसे हैं? यह भी बताया। ऊपर से तो सारे मनुष्य देह एक से दिखाई देते हैं, परन्तु हमारे अन्दर के विकार कितने गल गए, उस अविकारी परमात्मा के साथ हम कितने एकाकार हो गए, यह हमारे लक्षणों से पता चलता है, हमारे व्यवहार से पता चलता है।

दूसरे अध्याय में स्थितप्रज्ञ के लक्षण बताये हैं। बारहवें अध्याय में भक्त के लक्षण, तेरहवें अध्याय में ज्ञानी के लक्षण, सोलहवें अध्याय में दैवी़य और आसुरी सम्पत्ति प्राप्त लोगों के लक्षण और चौदहवें अध्याय में गुणातीत के लक्षण श्रीभगवान् ने बताये हैं। इस दृष्टि से यह अध्याय अत्यन्त
महत्त्वपूर्ण है।

जब से हमारा जन्म होता है, तब से हम ज्ञान अर्जन करते रहते हैं। ज्ञान हेतु हम पाठशाला जाते हैं, कानून सीखते हैं, तन्त्रज्ञान (Engineering) सीखते हैं, डॉक्टर बन जाते हैं। सृष्टि के ज्ञान अनन्त हैं, परन्तु परम ज्ञान तो जीवन का ज्ञान है, स्वयं के सूक्ष्म स्वरूप का ज्ञान है। सूक्ष्म और स्थूल संयोग से सृष्टि का कार्य चलता है। हमारे घर में बिजली सूक्ष्म रूप में आती है पर स्थूल रूप उपकरणों के माध्यम से आती है। हम आजीविका का ज्ञान तो लेते हैं पर दूसरा ज्ञान परम ज्ञान है। जड़ और चैतन्य के संयोग से सृष्टि चलती है।

श्रीभगवान् कहते हैं कि जब तक तुम्हारे मन में इस ज्ञान का ठहराव नहीं हो जाता तब तक मैं इस ज्ञान को बार-बार तुम्हें अच्छी तरह से बताऊँगा। जब तक इसकी गहराई में जाकर इसकी अनुभूति न कर लें, तब तक इसके सामीप्य में रहना, बार-बार पढ़ना, बार-बार विवेचन सुनना। गीता जी का उच्चारण करके इसका ठहराव हो जाता है। श्रीभगवान् कहते हैं कि इस ज्ञान को प्राप्त करने के बाद तुम्हारे दृष्टि कोण में क्या बदलाव आएगा, इसे भी तुम जान लो। सभी मुनि लोग परम सिद्धि को प्राप्त करते हैं। यह जीवन दायिनी ज्ञान है।

ठाकुर रामकृष्ण देव जी के जीवन का प्रसङ्ग है, उन्हें जब छह वर्ष की आयु में पाठशाला में भर्ती कराया गया, उन्होंने अपनी माता जी से कहा कि मुझे केवल दाल-रोटी की विद्या नहीं सीखनी है। मुझे जीवन दायिनी विद्या सीखनी है। दक्षिणेश्वर में रानी रासमणि जी ने उन्हें काली माता के नवनिर्मित मन्दिर में पुजारी के पद पर नियुक्त किया। उनके भाई ने कहा कि ये हमारी

माता हैं, तुम्हें इनकी पूजा करनी है। काली माता ने ही उनकी इस जीवनदायी विद्या का प्रबन्ध भी किया।

नवें अध्याय में भी श्रीभगवान् ने यही कहा-

।।इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे।।

सिद्धि कई प्रकार की होती है। एक है प्रसिद्धि, यह एक छलावे की तरह होती है। हम इसके पीछे लग जाते हैं। यह कभी-कभी हमें गिराती भी है। इस प्रकार की सिद्धियाँ आती हैं और चली जाती हैं। पतञ्जलि मुनि ने सारी सिद्धियों का वर्णन किया है। सिद्धियाँ मनुष्य की परीक्षा लेने के लिए भी आती हैं। श्रीभगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन! अब तुम उनको जानो जिन्होंने यह ज्ञान प्राप्त किया।

14.2

इदं(ञ्) ज्ञानमुपाश्रित्य, मम साधर्म्यमागताः।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते, प्रलये न व्यथन्ति च॥14.2॥

इस ज्ञान का आश्रय लेकर (जो मनुष्य) मेरी सधर्मता को प्राप्त हो गये हैं, (वे) महासर्ग में भी पैदा नहीं होते और महाप्रलय में भी व्यथित नहीं होते।

विवेचन: जो इस ज्ञान से चिपक कर रहता है वह इस ज्ञान को अपने जीवन में घोल लेता है, मेरे साधार्म्य तक पहुँचता है, मुझसे एकाकार हो जाता है। वह इस संसार में फिर जन्म लेकर नहीं आता। देह छोड़ते समय व्यथित नहीं होता। उसे पता है कि देह नश्वर है। एक दिन यह जाने वाला है। मेरा स्वरूप अविनाशी है। कभी न नष्ट होने वाला यह चैतन्य स्वरूप है। यह उसने जान लिया। उसकी अनुभूति प्राप्त की।

श्रीभगवान् ने पहले ही श्लोक में कहा-

यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे:।

कौन वहाँ तक पहुँचेगा? मुनि ही वहाँ तक पहुँचेगा। मुनि का एक अर्थ मनन करने वाला भी है। मननशील, जो मनन करता है। केवल पढ़ना एक बात है और पढ़ाना दूसरी बात है। पढ़कर विवेचन करना एक बात है, पर क्या हम वहाँ तक पहुँचे? श्रीभगवान् कहते हैं कि श्लोक कण्ठस्थ करने वाला या पढ़ाने वाला नहीं, अपितु मनन करने वाला ही परम सिद्धि तक पहुँच सकता है। विज्ञान हमारी उपजीविका का ज्ञान है।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

येथ काम करायचे विज्ञान, जेणे केवळ प्रपंच ज्ञान।
ऐसे म्हणेल तुझे मन, तरी आधी तेच आकळावे।।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि हम यही जीवनदायी विद्या ही क्यों नहीं सीख लेते? जीविका की विद्या सीखने की क्या आवश्यकता है? हम ठाकुर रामकृष्ण देव जैसे सिद्ध पुरुष तो नहीं हैं, दिव्यात्मा नहीं हैं, हमें पहले उपजीविका का ज्ञान प्राप्त करना ही पड़ेगा। **नि:श्रेयस और अभ्युदय** ये दोनों बातें जीवन में महत्त्वपूर्ण हैं।

धर्म के दो पहिये हैं, अभ्युदय और नि:श्रेयस। **अभ्युदय** का अर्थ होता है, भौतिक उन्नति। भगवद्गीता यह चाहती है कि हमारी भौतिक उन्नति भी होनी चाहिए, परन्तु मात्र भौतिक उन्नति के पीछे दौड़ते हुए, नैतिकता को छोड़कर, जीवन में केवल बटोरते

रहना, यह जीवन नहीं है। हमें नि:श्रेयस की भी प्राप्ति होनी चाहिए। **नि:श्रेयस** है, हमारा अन्तिम कल्याण़। भगवद्गीता दोनों बातों का सन्तुलन हमें सिखाती है। ज्ञान और विज्ञान दोनों ही बातें महत्त्वपूर्ण हैं।

यत: अभ्युदय: निश्रेयस हेतुर्य: , स: धर्म:।

उत्पत्ति, स्थिति और लय इन तीनों बातों का जो चक्र चलता है उससे मुक्ति होती है। जिसका प्रभव होता है, उसका प्रलय भी होता है। यह महत्त्वपूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के बाद, ज्ञानी पुरुष प्रलय के समय देह छोड़ने में व्यथित नहीं होता।

विवेकानन्द जी कहते हैं-

Education is menifestation of knowledge present already.

अपने अन्दर जो है उस पर से अज्ञान के बादल को हटाना, यही शिक्षा का उद्देशय होना चाहिए। वह अन्दर से बाहर आ जाए। वहाँ पर प्रवेश करने का मार्ग हो। शिक्षक कभी भी पूरा ज्ञान नहीं देते, बस हमारा उसमें प्रवेश करा देते हैं। केवल अपनी बुद्धि के अनुसार उसकी गहराई में हम जा सकते हैं, एक विद्यार्थी जा सकता है। उसे अपना मार्ग स्वयं ढूँढना पड़ता है। उसी प्रकार यह ज्ञान हमारे अन्दर ही है।

ज्ञानेश्वर महाराज ने सोलह वर्ष की आयु से ज्ञानेश्वरी लिखना प्रारम्भ किया और बाइस वर्ष की आयु में सम्पूर्ण ज्ञानेश्वरी उनके मुखारविन्द से प्रवाहित हुई और इसके पश्चात उन्होंने आळन्दी में सजीव समाधि ले ली।

वे कहते हैं-

एऱ्हवीं ज्ञान हें आपुलें । परी पर ऐसेनि जालें ।
जे आवडोनि घेतलें । भवस्वर्गादिक ॥

हमारे अन्दर ज्ञान है। श्रीभगवान् ने हमारे अन्दर ज्ञान का दीपक जलाया है, परन्तु वह अज्ञान से ढक गया है। संसार में हम इतने लिप्त हो गए हैं कि अपने वास्तविक स्वरूप को भूल गए। यह हमें इतना प्रिय हो गया कि मानो हमारा ज्ञान ही ढक गया।

श्रीभगवान् का साधर्म्य क्या है? क्या श्रीभगवान् का नाम प्राप्त होता है या रूप प्राप्त होता है? श्रीभगवान् के रूप तो अनेक हैं। वे कभी बंसीधर होते हैं, कभी गोवर्धन को धारण कर गिरिधारी होते हैं तो कभी सुदर्शन चक्रधारी होते हैं। कभी श्रीराम बनकर मनुष्य रूप को धारण करते हैं। निर्गुण निराकार और सगुण साकार रूप दोनों में ही उनकी पूजा की जाती है। जीव तो पहले ही श्रीभगवान् का अंश है, परन्तु उसने स्वयं को भुला दिया और सृष्टि के साथ एकाकार हो गया।

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।

सत्, चित्त और आनन्द ही श्रीभगवान् का वास्तविक रूप है। सत् अर्थात् अनन्त जीवन (जो समाप्त नहीं होगा), अव्यय (जिसका व्यय नहीं होता), चित्त अर्थात अखण्ड, सम्पूर्ण, परिपूर्ण ज्ञान, चिन्मय और आनन्द ही श्रीभगवान् का स्वरूप है। सुख और दुःख एक ही सिक्के के दो रूप हैं इसलिए सुख, आनन्द का समनार्थी शब्द नहीं है। आनन्द स्वाधीन सुख है। सृष्टि के किसी भी विषय पर सुख निर्भर होगा तो कभी न कभी छिन जाएगा, अतः स्वाधीन सुख आनन्द है जो सृष्टि पर अवलम्बित नहीं है। जो मेरे हाथ में है ऐसा सुख असीम सुख है। जो इस ज्ञान से लिपट कर रहता है, जो इस ज्ञान को अपने जीवन में उतारता है, वह परमात्मा के स्वरूप तक पहुँच जाता है और उसे जीवन छोड़ने का दुःख नहीं होगा।

एक साहूकार था। वह बहुत सम्पन्न था। सारे धन और स्वर्ण की प्राप्ति उसने कर ली थी, पर उसके बेटे निकम्मे निकले। कभी-कभी ऐसा होता है कि जब पिता बहुत धन अर्जित कर लेते हैं तो बेटे को लगता है कि उसे कार्य करने की अब कोई आवश्यकता ही नहीं है, अतः वो निठल्ले-निकम्मे हो जाते हैं। ऐसा ही उस साहूकार के साथ था, इसलिए उसने अपना सारा धन

एक स्थान पर छुपा कर रख दिया। धन को भूमि में गाड़कर अपने विश्वस्त मित्र को बता दिया कि जब मेरी अच्छी पीढ़ी आएगी और उसे धन की आवश्यकता होगी तो उसे बता देना कि धन यहाँ पर रखा है। साहूकार के पोते जब विदेश से पढ़कर वापस आये और उन्होंने देखा कि उसके पिता और चाचा ने सारा धन गँवा दिया है तो वे बड़े व्यथित हो गए। तब साहूकार के मित्र आये और उन्हें कहा कि दुःखी होने की आवश्यकता नहीं है। उनके दादा जी ने उनके लिए खजाना रखा है। उनके बताने के बाद सारा धन उस पीढ़ी को प्राप्त हो गया। बच्चों ने कहा कि आपने तो हमें मालामाल कर दिया। तब उन्होंने कहा कि यह तो आप ही का धन है। मैंने तो बस इसका आवरण हटाया है। उसी प्रकार हमारे अन्दर ज्ञान है और उससे आवरण हटाने वाले हमारे गुरु हैं। वह हमारे लिए महान ग्रन्थों की रचना करते है। वे हमारे लिए मार्ग प्रशस्त कर देते है।

14.3

मम योनिर्महद्ब्रह्म, तस्मिन्गर्भं(न्) दधाम्यहम्।
सम्भवः(स्) सर्वभूतानां(न्), ततो भवति भारत॥14.3॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! मेरी मूल प्रकृति तो उत्पत्ति स्थान है (और) मैं उसमें जीवरूप गर्भ का स्थापन करता हूँ। उससे सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति होती है।

विवेचन: हम जड़ भी हैं और चैतन्य भी। यह संयोग कैसे हुआ? श्रीभगवान् कहते हैं कि यह संयोग मैंने किया। श्रीभगवान् अर्जुन को भारत कहकर सम्बोधित करते हैं।

भारत
भा अर्थात् ज्ञान,
रत अर्थात् रमना।

श्रीभगवान् कहते हैं- हे भारत! अब तुम ज्ञान में रमने लगे हो और कहते हैं कि मैं ब्रह्म हूँ और मेरी योनि, मेरी पत्नी महद्ब्रह्म है। श्रीभगवान् अर्जुन को समझाते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार पति-पत्नी के संयोग से बालक का जन्म होता है और पति उसमें बीज डालते हैं और पत्नी गर्भ धारण करती है, इसी भाषा में समझो कि सृष्टि के जन्म में मैंने बीज डाला और महद्ब्रह्म से सृष्टि का निर्माण होता है। जैसे शिव के साथ शक्ति, सूर्य के साथ उसका प्रकाश, जल के साथ उसकी शीतलता अभिन्न हैं, उसी प्रकार परमात्मा के साथ प्रकीर्ति अभिन्न है।

matter के साथ energy अर्थात् जड़ के साथ चैतन्य का सम्बन्ध आइंस्टाइन ने $\mathbf{E=mc^2}$ दिया।

पहले चैतन्य और बाद में जड़ है। चैतन्य से जड़ की उत्पत्ति हुई, यह हमारा वेदान्त कहता है। जिस प्रकार माता और पिता के संयोग से बालक का जन्म होता है उसी प्रकार स्थूल और सूक्ष्म का संयोग होता है और इसी से सारे भूतमात्र की उत्पत्ति होती है।

14.4

सर्वयोनिषु कौन्तेय, मूर्तयः(स्) सम्भवन्ति याः।
तासां(म्) ब्रह्म महद्योनि:(र्), अहं(म्) बीजप्रदः(फ्) पिता॥14.4॥

हे कुन्तीनन्दन ! सम्पूर्ण योनियों में प्राणियों के जितने शरीर पैदा होते हैं, उन सबकी मूल प्रकृति तो माता है और मैं बीज-स्थापन करने वाला पिता हूँ।

विवेचन: हे कौन्तेय! सभी देहधारी चाहे वह पशु है, पक्षी है, वनस्पति है, उनका भी देह होता है। सब मूर्ति के रूप में हैं इसलिए हम मूर्ति के रूप में पूजा करते हैं, क्योंकि हम भी देहधारी हैं। चैतन्य भी हमारा स्वरूप है और जड़ भी हमारा स्वरूप है। सभी मूर्तियाँ, पेड़, पौधे, मछलियों, जानवरों की निर्मिति मेरी प्रकृति महद्ब्रह्म से होती है। उसमें बीज डालने वाला, उसमें चैतन्य देने

वाला ब्रह्म मैं ही हूँ ।

हर देश में तू, हर वेश में तू
तेरे नाम अनेक तू एक ही है।

अनेकता में विविधता है। यह विविधता तीन गुणों के कारण है। चन्द्रमा की शीतलता उसका गुणधर्म है। जल का बहना उसका गुणधर्म है। सूर्य का गुणधर्म प्रकाश है।

14.5

सत्त्वं(म्) रजस्तम इति, गुणाः(फ्) प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो, देहे देहिनमव्ययम्॥14.5॥

हे महाबाहो! प्रकृति से उत्पन्न होने वाले सत्त्व, रज (और) तम – ये (तीनों) गुण अविनाशी देही (जीवात्मा) को देह में बाँध देते हैं।

विवेचन: अब यह चैतन्य इस देह में बन्धित हो गया। इसे किसने इस देह में बाँधा और यह क्यों बँध गया? श्रीभगवान् कहते हैं कि प्रकृति के तीन गुण हैं जो उसके साथ ही उत्पन्न होते हैं। सत्त्व, रज और तम इनके नाम हैं। जो अव्यय, अविनाशी परमात्म तत्त्व है, जो चैतन्य स्वरूप है, उसका कभी नाश नहीं होता।

Energy can neither be created nor destroyed.

एक गुब्बारे में हीलियम गैस भरी होने से वह ऊपर जाता है। वह ऊपर न जाये इसके लिए उसमें वजन बाँध कर रखा जाता है। उसी प्रकार अव्यय, अविनाशी, चैतन्य तत्त्व देह में जड़त्त्व के कारण बन्धित हो गया। जब तक हम बन्धन को नहीं समझेंगे तब तक हम बन्धन से मुक्त होने का मार्ग भी नहीं समझेंगे। यह मानसिक बन्धन है। हम करना कुछ और चाहते हैं, होता कुछ और है। हम करना चाहते हैं, करना सम्भव भी है पर कर नहीं सकते हैं, क्योंकि हमें इन गुणों ने बाँध लिया है। जब तक हम यह नहीं समझेंगे तब तक जीवन का उन्नयन सम्भव नहीं है।

ज्ञानेश्वरी में ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

परि ते ज्ञान होता उदित, अन्य ज्ञानें होती लुप्त।
सर्व ज्ञानांत उत्तम हे ज्ञान।।

जब ज्ञान उत्पन्न होने लगता है, तब हम वास्तविक ज्ञान को समझने लगते हैं। श्रीभगवान् कहते हैं कि पहले सत्त्वगुण के लक्षण देखो। सत्त्व अर्थात् ज्ञान का प्रकाश, रज अर्थात् क्रियाशीलता और तम अर्थात् क्रिया शून्यता। ये तीन गुण सृष्टि में आवश्यक भी हैं। बन्धन के बिना ज्ञान की आवश्यकता भी नहीं होगी। क्रिया होनी भी चाहिए तो क्रिया रुकनी भी चाहिए। जैसे कार में पहिया भी होता है, स्टीयरिङ्ग भी होता है, पेट्रोल भी होता है। पेट्रोल के बिना कार नहीं चलेगी। स्टीयरिङ्ग नहीं होगा तो सही दिशा में नहीं चलेगी इसलिए ज्ञान भी चाहिए। बच्चा जब चलता है तो उसे ज्ञान भी चाहिए कि उसे कहाँ से कहाँ तक चलना है। बालक को यह समझ नहीं है अतः वह चलता रहता है।

सत्त्वगुण के कारण मनुष्य समझता है कि कब रुकना है और कब चलना है। तमोगुण के कारण रुकने की क्रिया होती है। पेड़ बड़ा होता है तो बढ़ता ही रहेगा, दाँत आते हैं तो तमोगुण के कारण बढ़ना रुकते हैं। तमोगुण भी आवश्यक है। सत्त्व के बिना ज्ञान नहीं, रज के बिना क्रिया नहीं और तम के बिना रुकने की क्रिया सम्भव नहीं। सारी सृष्टि एक सी होने के बाद भी हमारे अन्दर इन तीन गुणों का मिश्रण अलग-अलग होता है इसलिए हम सबका व्यवहार भी अलग-अलग होता है।

14.6

**तत्र सत्त्वं(न्) निर्मलत्वात्, प्रकाशकमनामयम्।
सुखसङ्गेन बध्नाति, ज्ञानसङ्गेन चानघ॥14.6॥**

हे पाप रहित अर्जुन! उन गुणों में सत्त्वगुण निर्मल (स्वच्छ) होने के कारण प्रकाशक (और) निर्विकार है। (वह) सुख की आसक्ति से और ज्ञान की आसक्ति से (देही को) बाँधता है।

विवेचन: श्रीभगवान् अर्जुन को अनघ कहते हैं।

अनघ का अर्थ है, निष्पाप। जिसमें तमो गुण बहुत कम है।

हे अर्जुन! तुम्हारे अन्दर निर्मलत्त्व है, क्योंकि तुम्हारे अन्दर सत्त्वगुण भरपूर है। तुम्हारी माता से तुम्हें ये गुण प्राप्त हुए हैं। सत्त्वगुण निर्मल प्रकाश को देने वाला है। यह भवरोग से मुक्ति देने वाला है, परन्तु फिर भी यह बाँधने वाला है। यह सुख और ज्ञान के बन्धन से बाँधता है।

ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं कि ज्ञान का भी अहङ्कार होता है।

।हा ज्ञानाने माजतो, अहङ्काराने नाचतो।

दूसरों को नीचे दिखाकर कभी-कभी हम स्वयं को ऊपर समझते हैं। गीता पढ़ने लगे, कण्ठस्थ करने लगे, प्रमाण पत्र भी प्राप्त कर लिया और फिर स्वयं को अलग समझने लगे। यह अहङ्कार ही है। यही बन्धन है, यही नीचे गिराता है। हमें ज्ञान के कारण बाँधता है। हम भगवद्गीता के विवेचन सुनें और पुस्तक पढ़ें, भगवद्गीता को कठस्थ और हृदयस्थ करें, यह ज्ञान की आराधना है। कोई व्यक्ति सत्त्वगुणी होता है तो उसे लगता है कि अब मैं पढता ही रहूँ, यह भी एक बन्धन ही है। यह भी गुणों की सङ्गति का ही परिणाम है। गुणों को हमने स्वयं का स्वरूप मान लिया। जिस प्रकार कार हमें एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर ले जाने के लिए है वैसे ही गुण भी हमें गन्तव्य तक ले जाने के लिए ही हैं। हम गुणों को ही अपना स्वरूप मान लेते हैं इसलिए बन्धनों में फँस जाते हैं।

14.7

**रजो रागात्मकं(म्) विद्धि, तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय, कर्मसङ्गेन देहिनम्॥14.7॥**

हे कुन्तीनन्दन! तृष्णा और आसक्ति को पैदा करने वाले रजोगुण को (तुम) रागस्वरूप समझो। वह कर्मों की आसक्ति से देही जीवात्मा को बाँधता है।

विवेचन: रज शब्द का अर्थ रञ्जन भी होता है। रज का अर्थ राग या आसक्ति भी होता है। हमारे परिवार के साथ, हमारे धन, सम्पत्ति, मान-प्रतिष्ठा के साथ आसक्ति निर्माण होती है। यह मनोरञ्जन भी चाहता है। यह तृष्णा से उत्पन्न होता है। तृष्णा निरन्तर बढ़ने वाली प्यास है। यह शान्त नहीं होती। एक मकान बना लिया, दूसरा भी चाहिए। रजोगुण चैतन्य को देह के साथ बाँधता है और निरन्तर कर्म करने की क्रिया चलती रहती है।

एक राजा मिदास के पास अथाह धन-दौलत थी फिर भी उसने वर माँगा कि वह जिस वस्तु को स्पर्श करे, वह स्वर्ण की हो जाए। उसकी इस तृष्णा के कारण उसने अपनी पुत्री को ही स्पर्श कर दिया और वह स्वर्ण की मूर्ति बन गयी। तृष्णा का अर्थ ही कभी न बुझने वाली प्यास होता है। यह रजोगुण के कारण उत्पन्न होती है, यह देह को बाँधती है और मनुष्य को दौड़ाती रहती है। जीवन कभी तो समाप्त होने वाला है, यह भान ही छूट जाता है। प्राप्ति की होड़ में इतने लग जाते हैं, दूसरों के साथ स्पर्धा में इतने लग जाते हैं कि कभी न कभी यह देह छोड़कर जाना है, यह भान छूट जाता है।

टौलस्टॉय की कहानी में राजा एक किसान को कहता है कि तुम जहाँ तक दौड़ोगे, मैं वहाँ तक की भूमि तुम्हें दे दूँगा, परन्तु शर्त यही है कि वहाँ तक जाकर सूर्यास्त से पहले वापस भी आना है। दौड़ते-दौड़ते सूर्यास्त की बेला आ जाती है। तब उसे समझ आता है कि वापस जाने के लिए समय और शक्ति दोनों ही नहीं बचे हैं। वह वहीं गिर जाता है। उसे मात्र तीन गज की भूमि चाहिए थी।

श्रीभगवान् कहते हैं कि यह भी बन्धन ही है, इसे हम नहीं समझते हैं।

14.8

तमस्त्वज्ञानजं(म्) विद्धि, मोहनं(म्) सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभि:(स्), तन्निबध्नाति भारत॥14.8॥

हे भरतवंशी अर्जुन ! सम्पूर्ण देहधारियों को मोहित करने वाले तमोगुण को तुम अज्ञान से उत्पन्न होने वाला समझो। वह प्रमाद, आलस्य और निद्रा के द्वारा देहधारियों को बाँधता है

विवेचन: तीसरा तमोगुण है। सत्त्वगुण आवश्यक है, रजोगुण आवश्यक है और तमोगुण भी आवश्यक है। विश्रान्ति भी आवश्यक है। इतना प्राप्त करने के बाद कोई कहे कि रात भर जागो तो तुम्हें इतना और मिलेगा तो मनुष्य कहेगा कि नहीं, मुझे अब सोना है। यह तमोगुण अज्ञान के कारण उत्पन्न होता है और मोहित कर देता है। तमोगुण बढ़ने से प्रमाद, आलस्य और निद्रा बढ़ते हैं। यह देह से बन्धित करता है।

अज्ञान के दो कारण होते हैं-
आवरण और विक्षेप।
आवरण अर्थात् ज्ञान की प्रक्रिया को ढक देना।
विक्षेप अर्थात् सही को गलत समझना।

जानामि धर्मं न च में प्रवृत्तिः जानाम्यधर्मं न च में निवृत्तिः
केनापि देवेन हृदि स्थितेन यथा नियुक्तोअस्मि तथा करोमि।

दुर्योधन कहता है कि मुझे पता है कि धर्म क्या है और मुझे क्या नहीं करना चाहिए, परन्तु उससे मेरी निवृत्ति नहीं होती। यह देव जो हृदय में स्थित है, उसके वशीभूत होकर मैं यह अधर्म करता हूँ। यह देवरूप वासना या कामना ही है जो अधर्म हेतु प्रेरित करती है। ये रजोगुण और तमोगुण के बन्धन हैं।

14.9

सत्त्वं(म्) सुखे सञ्जयति, रजः(ख्) कर्मणि भारत।
ज्ञानमावृत्य तु तमः(फ्), प्रमादे सञ्जयत्युत॥14.9॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! सत्त्वगुण सुख में (और) रजोगुण कर्म में लगाकर (मनुष्य पर) विजय करता है। परन्तु तमोगुण ज्ञान को ढककर एवं प्रमाद में लगाकर (मनुष्य पर) विजय करता है।

विवेचन: ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि तमोगुण ऐसा है कि मनुष्य यदि चलते-चलते भी गिर गया तो वहीं नींद लग जाती है।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

मार्गी हां जाता घसरून पडला, तेथेच लागे डोळा।
आणि हां झोपयता अमृत ही टाळे।।

अमृत भी उनके सामने आ जाये तो भी उन्हें नींद प्रिय है। बिस्तर, कुर्सी, फ़ोन सुनना, गलत बातें सुनना, समाचार सुनते रहना, बिस्तर पर लेटे रहना और इस प्रकार सारा जीवन चला जा रहा है पता ही नहीं है।

यह तमोगुण के अधिपत्य के कारण है।

श्रीभगवान् कहते हैं कि सत्त्वगुण सुख में बाँधता है। मनुष्य ज्ञान में रमने लगता है। कर्म की इच्छा नहीं रहती।
रजोगुण कर्म की हलचल में बाँधता है।
तमोगुण ज्ञान को ढक कर गलतियों में बाँधता है।
ये तीनो गुण एक दूसरे पर हावी होते हैं।

14.10

रजस्तमश्चाभिभूय, सत्त्वं(म्) भवति भारत।
रजः(स्) सत्त्वं(न्) तमश्चैव, तमः(स्) सत्त्वं(म्) रजस्तथा॥14.10॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! रजोगुण और तमोगुण को दबाकर सत्त्व गुण बढ़ता है, सत्त्व गुण और तमोगुण को दबाकर रजोगुण (बढ़ता है) वैसे ही सत्त्वगुण (और) रजोगुण को दबाकर तमोगुण (बढ़ता है)।

विवेचन: श्रीभगवान् कहते हैं- हे भारत! ये तीनों गुण एक दूसरे पर हावी होते हैं। रजोगुण और तमोगुण को दबाकर सत्त्वगुण बढ़ता है। जब कर्म की हलचल नहीं होती तो हमें पढ़ने की इच्छा होती है। अन्धेरा भी निवृत्त होता है।

तमोगुण चला गया, रजोगुण अभी आरम्भ होना है, ऐसे समय में सत्त्वगुण बढ़ता है। सत्त्वगुण और तमोगुण को दबाकर रजोगुण बढ़ता है।

सत्त्वगुण और रजोगुण को दबाकर तमोगुण बढ़ता है। कुछ भी हो रात को हमें सोना अच्छा लगता है, तब तमोगुण बढ़ता है।

दिन का समय सत्त्वगुण का समय है इसलिए बालकों को पढ़ने के लिए कहते हैं।

सारी सृष्टि कर्म में रत हो जाती है तब रजोगुण बढ़ता है और सन्ध्या को कर्म की हलचल शिथिल होने लगती है तब तमोगुण बढ़ने लगता है। तब हमें विश्राम की आवश्यकता होती है।

14.11

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्, प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं(म्) यदा तदा विद्याद्, विवृद्धं(म्) सत्त्वमित्युत॥14.11॥

जब इस मनुष्यशरीर में सब द्वारों (इन्द्रियों और अन्तःकरण) में प्रकाश (स्वच्छता) और ज्ञान (विवेक) प्रकट हो जाता है, तब जानना चाहिये कि सत्त्वगुण बढ़ा हुआ है।

विवेचन: हमारी देह के नौ द्वार हैं- दो नासिका, दो कान, एक जिह्वा, मुख, त्वचा। जिनसे सृष्टि अन्दर आती है। इन सबसे विवेक की शक्ति उत्पन्न होती है, तब हमारा सत्त्वगुण बढ़ रहा है। हमारी ज्ञान की लालसा बढ़ रही है।

ऐकु नव्हे ते कानचि वाळी, न पहाणें ये दिठीचि गाळी,
अवाच्य तें टाळी जीभचि गा।।

ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं कि दृष्टि को जो नहीं देखना चाहिए, उसकी इच्छा नहीं होती। गलत पुस्तकें पढ़ना, गलत सिनेमा

देखने की इच्छा ही नहीं होती। यदि कोई किसी की निन्दा कर रहा है तो उसे सुनने की इच्छा नहीं होती तो समझ लो कि सत्त्वगुण बढ़ रहा है। अच्छे महानुभावों के बारे में पढ़ने की इच्छा होने लगती है तो समझना कि सत्त्वगुण बढ़ रहा है।

14.12

लोभः(फ्) प्रवृत्तिरारम्भः(ख्), कर्मणामशमः(स्) स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे भरतर्षभ॥14.12॥

हे भरतवंशमें श्रेष्ठ अर्जुन ! रजोगुण के बढ़ने पर लोभ, प्रवृत्ति, कर्मोंका आरम्भ, अशान्ति और स्पृहा -- ये वृत्तियाँ पैदा होती हैं।

विवेचन: हे, भारत श्रेष्ठ अर्जुन! तुममें सत्त्व और रजोगुण दोनों ही हैं। दोनों का संयोग होना चाहिए।

हमारे हित में गुरु और शिष्य का संयोग जो होता है वह महर्षि वशिष्ठ और श्रीराम जी का संयोग है। तभी संसार में अच्छे कार्य होते हैं।
जब रजोगुण और तमोगुण का संयोग होता है तो संसार में गलत क्रियाएँ होती हैं। बम फटते हैं और युद्ध होते हैं।

रजोगुण को **ज्ञानाधिष्ठित** करना पड़ता है। क्रियाशीलता तो चाहिए, परन्तु ज्ञान के साथ। रजोगुण बढ़ने से लोभ प्रवृत्ति और सकाम बुद्धि से सकाम कर्म और दुर्योधन की भाँति दूसरों का छीनने की इच्छा होती है। शरीर थक जाएगा पर लोभ नहीं थकता, और चाहिए ही चाहिए यही वृत्ति बढ़ती है। जो रजोगुण के अधीन हो जाते हैं उन्हें रात को नींद नहीं आती है। उनमें तमोगुण भी नहीं आता। नींद की गोलियाँ खानी पड़ती हैं। ज्ञान लुप्त हो जाता है। राही मासूम रजा की पङ्क्तियाँ हैं,

पत्ता भी गर हिलता है उसकी रजा से
कि बन्दा भी जो गुनहगार है मालूम नहीं क्यों?

गुनहगारी क्यों बढ़ती है इसका उत्तर यहाँ पर है।

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।

तीसरे अध्याय में श्रीभगवान् ने कहा है जब रजोगुण बढ़ता है तो इच्छाएँ बढ़तीं हैं और जब इच्छाएँ पूर्ण नहीं होती हैं तो क्रोध आता है और गलत काम होने लगते हैं।

14.13

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च, प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे कुरुनन्दन॥14.13॥

हे कुरुनन्दन! तमोगुण के बढ़ने पर अप्रकाश, अप्रवृत्ति तथा प्रमाद और मोह – ये वृत्तियाँ भी पैदा होती हैं।

विवेचन: अप्रकाश अर्थात सत् विवेक बुद्धि का अभाव, भ्रान्तियाँ, क्या करना चाहिए क्या नहीं? जब तमोगुण बढ़ता है तो क्या होता है?
ज्ञान और सत् विवेक बुद्धि का अभाव, कर्त्तव्य करने में आलस और प्रमाद अर्थात् गलत काम करना बढ़ जाता है। प्रमाद, आलस्य, निद्रा सभी अवगुण बढ़ जाते हैं और जब ये बढ़ जाते हैं तो हमें समझ लेना चाहिए कि तमोगुण बढ़ रहा है।

तमोगुण को रोककर रजोगुण में जाना और रजोगुण को सत्त्वगुण में लाना, सत्त्वगुण और रजोगुण के संयोग से कार्य करना और गुणातीत होना और उसके बाद गुणातीत के लक्षण कैसे हैं? यह आगे चलकर श्रीभगवान् हमें बताएँगे, परन्तु ये गुण जीते जी हमें छोड़ते नहीं हैं। ये बन्धन हैं अतः यह देह छोड़ने के बाद भी हमें छोड़ते नहीं हैं। किस प्रकार से ये कौन से लोक में ले जाते हैं? ये

बातें भी श्रीभगवान् हमें बताएँगे। ये मानसिक बन्धन हैं। ये न दिखने वाली रस्सी है।

स्वामी राम कृष्ण देव जी की एक कथा है। एक वन में तीन डाकू रहते थे। जो भी यात्री वहाँ से जाते थे, ये उन्हें लूट लेते थे। उनका धन, जेवर आदि का हरण कर लेते थे। उनमें से प्रत्येक डाकू की एक विशेषता थी। पहला डाकू कहता था कि इस यात्री को यहीं मार दो। दूसरा कहता था, मारते नहीं हैं, इसे पेड़ से बाँध देते हैं। यह भूख-प्यास से स्वयं ही मर जाएगा अथवा जङ्गली जानवर इसे खा जाएँगे और वे दोनों उस यात्री को लूटकर उसे वृक्ष से बाँध कर चले जाते।

रात को तीसरा डाकू आकर उसका बन्धन खोल देता और उसे जङ्गल की सीमा तक ले जाता। वहीं से उसे उसका घर दिखाकर रास्ता बता देता पर घर तक नहीं जाता था क्योंकि उसकी भी एक सीमा है। इसी प्रकार सृष्टि में तमोगुण तुरन्त मार देने वाला डाकू है। उसके कारण तो जीवन अधोगति को ही जाएगा।

दूसरा रजोगुण, लोभ की भाँति है। वह कहता है कि बाँध दो, कभी न कभी समाप्त हो जाएगा। रजोगुण के कारण अभी अधोगति नहीं होगी पर कभी न कभी तो होगी।

तीसरा सत्त्वगुण बढ़ गया तो हमें मार्ग भी मिलेगा, सीमा समाप्त होने पर हमारे घर की दिशा भी दिखायेगा। वह बताएगा कि आगे चलकर यात्रा तुम्हें स्वयं करनी है, इसलिए तीनो गुण श्रृङ्खला हैं।

स्वामी जी कहते हैं-
तमोगुण लोहे की श्रृङ्खला है।
रजोगुण चाँदी की श्रृङ्खला है।
सत्वगुण सोने की श्रृङ्खला है,
पर हैं तो श्रृङ्खला ही।

गुलाबराव जी महाराज कहते हैं कि सत्त्वगुण के कारण हम वहाँ तक पहुँच सकते हैं, इसलिए सत्त्व वृद्धि ही धर्म है।

ये तीनो गुण हमारे जीवन को कैसे बाधित कर सकते हैं और कैसे खोल सकते हैं? यह अगले सत्र में देखा जाएगा।

साधकों की जिज्ञासाओं के समाधान के साथ आज का सत्र समाप्त हुआ।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता- श्री रमेश प्रसाद भैया
प्रश्न- इस अध्याय के पहले श्लोक में भूय और अभिभूय शब्दों का प्रयोग हुआ है, इन दोनों में भूय का अर्थ अलग-अलग है क्या?
उत्तर- एक ही शब्द को विभिन्न अर्थ में प्रस्तुत करना एक प्रक्रिया है। भूय का अर्थ है बार-बार, एक बात को दोहराना और अभिभूय का अर्थ है दबाना। यहाँ तीनो गुण एक दूसरे पर हावी होते हैं या दबाते हैं।

प्रश्नकर्ता- श्रीमती गीता शर्मा दीदी
प्रश्न- कहा जाता है कि श्रीभगवानज जिसे चाहते हैं उसे अपने पास बुलाते हैं। मथुरा में भीड़ होने से राधारानी के दर्शन नहीं हो पाए तो क्या श्रीभगवान् हमें बुलाना नहीं चाहते थे?
उत्तर- श्रीभगवान् हमें अपने पास बुलाते हैं, यह हमारे मन की धारणा होती है, इसलिए घर में ठाकुरबाड़ी होते हुए भी हम मन्दिर जाते हैं, जहाँ हमारी प्रार्थना सुनी जाती है। मन्दिर जाकर भी यदि श्रीभगवान् के दर्शन नहीं हो पाए तो उसे मन पर नहीं लेना चाहिए क्योंकि श्रीभगवान् ने तो आपको देख लिया है कि उन तक पहुँचने के लिए आपने कितने कष्ट उठाए हैं।
राधा रानी ने भी आपको देख लिया है। ज्ञान की धारा जब ऊपर की ओर बहती है तब वह राधा बन जाती है। यदि मन्दिर के कलश के दर्शन भी हो जाएँ तो वह भी पुण्य ही होगा, मूर्ति रूप नहीं देखा, तब भी श्रीभगवान् की प्रेरणा से चैतन्य तत्त्व प्रस्फुटित होता है।

प्रश्नकर्ता - श्री सञ्जीव कुमार भैया
प्रश्न- जब बच्चे का जन्म होता है तो क्या तीनों गुण अनुपात में होते हैं?
उत्तर ्- सोलहवें अध्याय में श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा है

।।मा शुचः सम्पदम् दैवी, अभिजातोसि पाण्डव।।

अर्जुन जन्म से क्षत्रिय थे, युद्ध करना उनका कर्त्तव्य था।
पूर्व जन्म के अनुसार ये तीन गुण कम या अधिक हो सकते हैं। इनके मिश्रण से हमारा स्वभाव निर्धारित होता है। जिसमें जो गुण कार्यशील होता है उसका स्वभाव वैसा ही हो जाता है।

एक माँ की तीन सन्तानें हैं जिनके स्वभाव अलग-अलग हैं। पहला बेटा पाठशाला से आते ही अपनी वस्तुएँ जगह पर रखता है, कुछ खाकर पढ़ाई के लिए बैठ जाता है, माँ को कुछ भी कहना नहीं पड़ता। सत्त्वगुण कार्यशील है इसलिए वह बिना कुछ कहे और बिना मोह के अपने काम कर लेता है।

दूसरा बेटा घर आते ही अपनी वस्तुएँ फेङ्क कर खेलने चला जाता है। माँ को उसे पढ़ने के लिए कहना पड़ता है कि बेटा गृहकार्य कर लो तो तुम्हें आइसक्रीम मिलेगी और वह आइसक्रीम के मोह में पढ़ने लगता है। यहाँ रजोगुण सक्रिय है इसलिए यह बालक खेलने में अधिक रुचि रखता है और उसे कुछ पाने का लालच भी है।

वहीं तीसरा बेटा घर आकर अपनी वस्तुएँ फैला देता है और आराम से सोफे पर लेकर दूरदर्शन देखने लगता है और माँ के आइसक्रीम देने की बात पर कहता है कि पहले आइसक्रीम दो फिर वह पढ़ेगा। इस बेटे में तमोगुण का बाहुल्य है इसलिए वह आलसी है और लालची भी है।

जब कार्यशील रजोगुण सत्त्वगुण से मिल जाता है तो अच्छे कर्म होते हैं और यदि रजोगुण तमोगुण से मिल जाए तो गलत काम होते हैं।

प्रश्नकर्ता- श्रीमती मिताली दीदी
प्रश्न- अन्याय होने पर उसका विरोध करना चाहिए या श्रीभगवान् के न्याय की प्रतीक्षा करनी चाहिए?
उत्तर- अन्याय के लिए अवश्य लड़ना चाहिए। यदि सत्त्वगुण कार्यशील है तो विवेक जागृत होता है और हम ठीक तरह से सोचकर विरोध कर सकते हैं, लेकिन यदि तमोगुण कार्यशील है तो हमामें विचार करने की शक्ति नहीं रहती और हम लड़ झगड़कर विरोध करते हैं। हमसे अपराध भी हो सकता है।

अर्जुन रजोगुणी थे परन्तु श्रीकृष्ण उनके साथ सत्त्वगुण के रूप में थे, जिन्होंने उन्हें गलत काम करने से रोका। जीवन समाप्त होता जाता है फिर भी हम लड़ते ही रहते हैं। सत्त्वगुण हमें विरोध करने की सीमा से अवगत कराता है।

न्याय मिलने में विलम्ब होने पर अन्याय से लड़ने की शक्ति क्षीण हो जाती है। दफ्तर में यदि हमारी जगह किसी और को पदोन्नत किया जाता है तो क्या हम नौकरी छोड़ देते हैं? नहीं, हमें इसका विरोध करना चाहिए, शान्त नहीं रहना है, अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाकर अपना कर्त्तव्य निभाना है। भगवद्गीता या अन्य आध्यात्मिक पुस्तकें पढकर सत्त्वगुण बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता- श्री मनोज कुमार भैया
प्रश्न- व्यसन किस गुण के अन्तर्गत आते हैं? गीताजी के माध्यम से इससे कैसे मुक्त हो सकते हैं?
उत्तर- व्यसन तमोगुण के अन्तर्गत आते हैं। यह तमोगुण के बढ़ने का प्रभाव है। भगवद्गीता पढकर, सत्सङ्ग से इससे मुक्त हो सकते हैं। व्यसन मुक्ति केन्द्र में अच्छे काम करवाए जाते हैं, जैसे भजन कीर्तन करना, योगाभ्यास करना आदि जिनसे हम अच्छे कार्य की ओर प्रवृत्त होते हैं और तमोगुण से बाहर आते हैं। समर्थ रामदास जी इसे सत्त्वाभिष्टित या ज्ञानाभिष्टित रजोगुण कहते हैं। कुछ लोग एक लाख बार श्रीराम नाम लिखते हैं इससे भी सत्त्वगुण बढ़ता है और व्यसन शिथिल होने लगते हैं।

प्रश्नकर्ता- श्रीमती दीप्ति विकास श्रीश्रीमाल दीदी

प्रश्न- पढ़ना बन्धन कैसे हो सकता है?
उत्तर- पढ़ना बन्धन तब होता है जब हम वहीं पढ़ते रहना चाहते हैं जो हमें अच्छा लगता है। यह शिथिल बन्धन है। हमारा मन उससे बाहर आना ही नहीं चाहता।

एक गृहिणी के लिए अतिथि सत्कार एक कर्त्तव्य है परन्तु यदि वह उसे भुलाकर केवल पढ़ने में या प्रवचन सुनने में मग्न हो जाती है तब यह बन्धन हो जाता है।

प्रश्नकर्ता- श्रीमती दीप्ति विकास श्रीश्रीमाल दीदी
प्रश्न- क्या पुनर्जन्म सत्य है?
उत्तर- जी हाँ, यह सत्य है। आज हम जो भी हैं हमारे पूर्वजन्म के कर्मों के कारण ही हैं। इस जन्म में यदि हम अच्छे कर्म करते हैं तो हम अपना भविष्य संवार सकते हैं। हमारा जीवन तीनों गुणों का मिश्रण है। सत्त्वगुण बढ़ने से ज्ञान की इच्छा, अच्छे काम करने की इच्छा अधिक होती है जिससे हमारा, हमारे परिवार का और राष्ट्र का कल्याण हो सकता है।

प्रश्नकर्ता-- श्री खुशीराम भैया
प्रश्न - क्या बच्चे के जन्म से पहले उसके तीनों गुणों के अनुपात का पता लगा सकते हैं?
क्या ब्राह्मण जाति से होते हैं? क्या उन्हें ज्ञानी कहा जा सकता है?
उत्तर- हमारे गुण हमें हमारे पूर्वजों से गुणसूत्रों के माध्यम से मिलते हैं इसलिए यह अनुवांशिक है। जिसमें जो गुण क्रियाशील है वहीं उसके कर्त्तव्य कर्म होंगे। क्षत्रिय रजोगुणी हैं, वैश्य और शुद्रों में सेवा भाव होता है। वातावरण के प्रभाव से भी गुण निर्धारित होते हैं।

ब्रह्मेण चरति इति ब्राह्मणः।

ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता रखने वाले ब्राह्मण होते हैं। ब्राह्मण ज्ञान के आराधक होते हैं।

डॉक्टर भीमराव अम्बेडकर अत्यन्त ज्ञानी और ज्ञान पिपासु थे, उनका एक बहुत बड़ा पुस्तकालय भी था, इस प्रकार से वे ब्राह्मण ही थे, जिन्होंने संविधान का निर्माण किया। शब्दों के जाल में फँसकर ब्राह्मण शब्द से द्वेष नहीं करना चाहिए। श्रीमद्भगवद्गीता का मूल सूत्र है-

सर्व भूत हिते रतः।
भगवद्गीता में किसी धर्म या जाति की बात नहीं कही गई है। इसमें मात्र दो ही प्रकार के जीवों का उल्लेख है दैव और आसुरी-

द्वौ भूत सर्गौ लोकेऽस्मिन् दैव आसुर एव च।।16.06।।

इसलिए धर्म और जाति के जाल में नहीं उलझना चाहिए।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||